Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

नवीन विश्व व्यवस्था और भारतीय विदेश नीति

मदन कुमार वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र,
उपाधि (पी.जी.) महाविद्यालय, पीलीभीत, उत्तर प्रदेश।

सारांश– भारत ने अब विचारधारा को छोड़कर राष्ट्रीय हित के आधार पर विदेश नीति के निर्धारण का संकल्प लिया है। भारत द्वारा 1998 में किया गया परमाणु विस्फोट इसी नीति का परिचायक है। इसके साथ–साथ भारत द्वारा U.N.O. के लोकतंत्रीकरण की मांग भारत के राष्ट्रीय हित के साथ–साथ विश्वहित से भी प्रेरित है। भारत ने अपने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर उत्तर से सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है। उक्त सभी तथ्यों की प्राप्ति हेतु नवीन विश्व व्यवस्था में भारत ने देश के अंदर राष्ट्रीय सहमति के माध्यम से पाने का प्रयास किया है। संक्षेप में हम कह सकते है कि नई विश्व व्यवस्था में भारतीय विदेश नीति अधिकाधिक वैश्विक स्तर पर स्वावलम्बी बनने का प्रयास कर रही है।

मुख्य शब्द – नवीन विश्व, व्यवस्था, भारतीय, विदेश नीति।

सन् 1991 में पूर्व सोवियत संघ के विखंडन के साथ उस शीत–युद्ध का अंत हो गया जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण विश्व द्वि–ध्रुवीय विश्व–व्यवस्था में बँट गया था। अब शीतयुद्ध के अंत से अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में परिवर्तन आ गया। अब अमेरिका के नेतृत्व में उदारवादी मूल्य सम्पूर्ण विश्व में प्रभावी हो गये। जिसके परिणामस्वरूप धीरे–धीरे सभी विकासशील देश अपनी वैदेशिक नीति को G-7 के देशों और एकमात्र महाशक्ति अमेरिका के पक्ष में मोड़ने को बाध्य हुए हैं। भारतोय वैदेशिक नीति उक्त बदले वैश्विक परिदृश्य में अपवाद नहीं हो सकती।

अतः भारत ने अपनी वैदेशिक नीति को पुर्नसृजित करने का प्रयास किया है क्योंकि द्वि–ध्रुवीयता के अंत से गुटनिरपेक्षता आप्रासंगिक हो गयी। इस पुर्नसूत्रण के युग में भारतीय वैदेशिक नीति को कठिन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। P.N. धर ने ठीक ही लिखा है कि 'चुनौती जिसका सामना आज भारत कर रहा है नेहरू द्वारा 1947 में सामना की गयी चुनौती के समान है' (1) 20 दिसम्बर 1991 को संसद में बोलते हुए प्रधानमंत्री नरसिंहाराव ने कहा था कि 'उनकी सरकार बदलते हुए पर्यावरण में स्यंत्र को अनुकूलित करने को तैयार है और क्षेत्रीय संरचना की आवश्यकता के सम्बन्ध में सचेत है और सामंजस्य पर आधारित अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था और शांति के लिए उत्सुक है'

वास्तव में वैदेशिक नीति के पुर्नअभिमुखीकरण के प्रकाश में, हमें नये पहल करन होंगे, पुराने विश्वास व मिथको को निकाल देना होगा। और दूसरे देशों के साथ सम्बन्धों को पुर्नरीक्षित व संशोधित

करना होगा। अतः भारत ने नई विश्व व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में अपनी वैदेशिक नीति के परम्परागत आधारों में परिवर्तन के साथ उसमें नये तथ्यों व मूल्यों का समावेश किया है जिसका विवरण निम्न है।

1. गुट निरपेक्षता :– गुट निरपेक्षता का जन्म सन् 1961 में बेलग्रड में द्वि–ध्रुवीय विश्व–व्यवस्था में समान दूरी के सिद्वांत के आधार पर हुआ। जिसके दो प्रमुख उद्देश्य था।

   प्रथम दोनों गुटों से समान दूरी के सिद्वांत के आधार पर आर्थिक सहायता लेना और द्वितीय विश्व से उपनिवेशवाद, जातिवाद एवं रंगभेद को खत्म करने हेतु तृतीय विश्व को एकजुट करना एवं इसका विरोध करना।

वास्तव में सम्पूर्ण विश्व से उक्त दोनों चीजों का अस्तित्व मिट चुका है। ऐसी स्थिति में गुट निरपेक्षता आप्रसंगिक हो गयी है। गुट–निरपेक्षता की आप्रासंगिकता उस समय प्रत्यक्ष देखी गयी। जब गुटनिरपेक्ष देशों के 15 विदेश मंत्रियों का सम्मेलन 12 फरवरी 1991 को वेलग्रेड में हुआ, कि खाडी संकट से कैसे निपटा जाय इस सम्मेलन पर टिप्पणी करते हुए G.N. जेनसन ने लिखा था कि' बेलग्रड वह स्थान था, जहाँ औपचारिक रूप से गुट–निरपेक्षता सितम्बर 1961 में अस्तित्व में आयी थी और जहाँ 12 फरवरी 1991 के बुद्धवार के दिन इसका औपचारिक अंत हो गया।

एक अन्य तथ्य यह भी है कि इस्लामिक कट्टरता, मानवाधिकार, आतंकवाद, परिस्थितकीय पर्यावरण जैसे वर्तमान विश्व स्तरीय मुद्दे को संचालित करने के लिए उपयुक्त मंच गुट–निरपेक्षता नहीं अपितु U.N.O. है। आज प्रयास दक्षिण–दक्षिण सहयोग और उत्तर–दक्षिण के मध्य संवाद के माध्यम से परमाणु अस्त्र नियंत्रण और निरस्तीकरण, पर्यावरण, पारिस्थितिकी और नई विश्व व्यवस्था से आर्थिक मुद्दो पर बल दिया जा रहा है। यह संदेह कि ऐसे मुद्दों को संचालित करने के लिए उचित यंत्र गुटनिरपेक्षता के पास है।

उक्त सभी तत्व यह सलाह देते है कि भारत को अपनी वैदेशिक नीति से गुट–निरपेक्षता के लक्षणों को निकाल देना चाहिये। और गुट–निरपेक्षता से स्वतन्त्र होकर अपने सम्बन्धों को नया आयाम दें। द्वि–पक्षीय और बहु–पक्षीय आधार पर पुनः अन्य देशों में सम्बन्ध बनाये। ताकि अपने राष्ट्रीय हित को बदलते वैश्विक पर्यावरण में पा सके।

2. सुरक्षा और प्रादेशिक अखंडता :– चर्चिल ने कहा था कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में 'न स्थायी शत्रु होते है और न स्थायी मित्र।' लेकिन यह उक्ति भारत–पाक के सम्बन्धों में अपवाद है। इसके दो कारण है –

1. काश्मीर विवाद एवं
2. भारत में विद्यमान मुस्लिम अल्पसंख्यक

भारत–पाक के मध्य विद्यमान उक्त दो विवादों के कारण जहाँ भारत–पाकिस्तान के मध्य कई युद्ध हो चुके है, तो वही दूसरी तरफ पाकिस्तान जम्मू–काश्मीर सहित देश के सम्पूर्ण भाग में आतंकवाद को

बढ़ावा देने के साथ भारत में अलगाव विराधेी गतिविधियों को भी बढ़ावा दे रहे है। पाकिस्तान के साथ भारत का सम्बन्ध दृढ़ता पूर्वक पारस्परिकता पर आधारित होना चाहिए। भारत–पाकिस्तान के मध्य कोई वार्ता मात्र इस विषय पर हो, कि पाकिस्तान कब हमें पाक अधिकृत काश्मीर वापिस कर रहा है, तभी समस्या का व्यवहारिक समाधान सम्भव है। पंजाब के तरफ की सीमा बंद होनी चाहिए। भारत को पाक आधारित आतंकवादी कैम्पों पर बम वषां कर देना चाहिए, तभी आतंकवाद रूकेगा। भारतीय कूटनीति का यह कार्य होना चाहिए कि वास्तविक नियन्त्रण रेखा के समानान्तर व्यवस्था पर सहमति हेतु पाश्चात्य शक्तियों की मदद ले,इसका तात्पर्य पाक अधिकृत काश्मीर को खोना, लेकिन वर्तमान युग में परमाणु आयुध से सम्पन्न दोनों देशों क मध्य समस्या का व्यवहारिक समाधान यही है।

वास्तव में काश्मीर भारत और पाश्चात्य शक्तियों के मध्य भविष्य में बड़े समझौते का एकमात्र विषय है। जिसमें इस्लामी चरमपंथियों के प्रत्येक मुद्दे को समाविष्ट करना चाहिये। सीनेटरलैरी प्रेसलर ने 1992 में कहा था कि '90 के दशक के नाभकीय क्षमता के साथ दक्षिण–पश्चिम एशिया और केन्द्रीय एशिया के इस्लामी देशों में इस्लामिक चरमपंथियों के संघ के उदय ने भारत और विश्व पर गम्भीर सरक्षा संकट का भय थोप दिया है। इसमें भौगोलिक रूप से 9 जुड़े हुए इस्लामी देश है जिसमें पाकिस्तान शामिल है ये मिलकर कार्य कर सकते है। और भारत व विश्व के लिए खतरा बन सकते है। इसमें पाक, टर्की, इरान, अफगानिस्तान और सोवियत संघ से मुक्त हुए पांच केन्द्रीय ऐशियन देश कजाकिस्तान, उजबेगिस्तान किग्रिस्तान, तुर्कमेनिस्तान और तजाकिस्तान शामिल है। जिनके पास परमाणु क्षमता भी है। जिसने भारत ही नही अमेरिका की चिंता को भी बढ़ा दिया है। उभरते तथ्य यह सलाह दे रहे है कि भारत के विरूद्ध कोई 'रणनीतिक संरचना' सम्भव है। ताशकंद में पांचों केन्द्रीय ऐशियन गणराज्यों ने एक सम्मेलन आयोजित कर 'अर्न्तगणराज्य सहयोग परिषद का गठन' किया है। ताशकंद के बाद 1992 में अस्काबाद में एक सम्मेलन आयोजित किया गया, इसमें काश्मीर मुद्दे पर पाक का समर्थन किया गया। परिणाम यह हुआ कि कि पाक द्वारा सम्मेलन में उपस्थिति दर्ज कराया गया। जैसा कि रसियन सरकार के दैनिक पत्र रोसिल्या गजट ने लिखा था कि 'पाक ने केन्द्रीय ऐशियन गणराज्यों की मदद से भारत विरोधी गठ–जोड़ स्थापित करने का प्रयास किया है।' वास्तव में यह एक 'इस्लामिक ध्रुव' की उत्पत्ति है जिसके द्वारा भविष्य में भारत के विरूद्ध कोई भी 'रणनीतिक संरचना' सम्भव है। पाकिस्तान के स्तम्भकार मुशाहिद हुसैन इसे 'इस्लामिक ध्रुव' की उत्पत्ति के रूप में देख रहे है और जो पश्चिमी आधिपत्य के समान्तर खड़ा हो सकेगा।

उक्त विकासों पर भारत को गम्भीर होना चाहिये और अपने वैदेशिक नीति की कार्य–सूची में इसे उच्च स्थान देना चाहिये विशेष रूप से इस्लामी परिसंघ के विरूद्ध एक मंच तैयार करना चाहिये जो विश्वस्तरीय हितों के अनुरूप होना चाहिये। क्योंकि इस्लामी चरमपंथी उदारवादी लोकतन्त्र के आधारभूत मानकों एवं मूल्यों को प्रत्यक्ष भय पैदा करते है, यही कारण था, कि परिश्च साम्यवाद के विरूद्ध था अतः

अब एक दिन पश्चिम को इस्लामिक चरमपंथियों क विरूद्ध लौटना होगा। यही हमारी कूटनीति का महत्वपूर्ण कार्य होना चाहिये।

उक्त कार्य में भारत अमेरिका के साथ–साथ इजरायल को भी प्राकृतिक रूप से सहयोगी पायेगा। क्योंकि इस्लामिक चरमपंथी मानवाधिकार के सिद्वान्तों का विरोध करते है लोकतन्त्र के विरूद्ध है, धार्मिक सहिष्णुता का विरोध करते है। इजरायल को अरबों द्वारा लगातार धमकाया जाता है और उसके विकास में बाधा पैदा की जाती है। इजरायल ने दृढ़तापूर्वक प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दिया है।

अतः पाकिसतान व उसके द्वारा तैयार किये जा रहे 'इस्लामिक ध्रुव' के प्रतिउत्तर में हमारी वैदेशिक नीति को अमेरिका व इजरायल को साथ लेकर इस उभरते इस्लामिक ध्रुव का प्रतिउत्तर देना होगा। यही कारण है, कि भारत ने इजरायल के साथ 1992 में पूर्ण कूटनीतिक सम्बन्ध बना लिये है। और उस तेल कूटनीति का समाधान भी हमें खोजना होगा जिसका समय–समय पर प्रयोग अरब देश गैर–मुस्लिम शत्रु देश के विरूद्ध करते रहे है। एक बार चीन के प्रीमियर चाऊ–एन–लाई ने चीन ने भारतीय राजदूत R.K.नेहरू ने कहा था, कि जबकि चीन व भारत के मध्य विभिन्नताएं अस्थायी प्रकृति की है लेकिन भारत–पाक के सम्बन्ध में ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि यदि काश्मीर विवाद हल कर लिया जाय तो भी भारत में विद्यमान मुस्लिम अल्पसंख्यकों के कारण पाक भारत के लिए सदैव उत्तेजक बना रहेगा।

3. <u>द्वि–ध्रुवीयता का अंत</u> :– ग्लास्नोस्त और पेरोस्त्रोइका के नाम पर पूर्व U.S.S.R.के विस्मयकारी विकास के सन्दर्भ में विकासशील देश के जनमत में एक भ्रम था। यह भ्रम विकासशील देशों का उस समय दूर हुआ, जब 1991 में सोवियत संघ का विखंडन होते ही शीत युद्ध का अंत हो गया। और यह घटना उस समय घटी जब U.S.A. के प्रभाव का विश्व में पतन हो रहा था, पर अमेरिका के भाग्य ने उसे शीतयुद्ध में विजय दिला दी। जिससे अमेरिका के नेतृत्व में पाश्चात्य मूल्य पूरे विश्व में प्रभावी हो गये।

लेकिन शीतयुद्ध का अंत सहसा हुआ, जिसके लिए दक्षिण के देश अर्द्धरूप से ही तैयार थे। इसीलिए यह कहा जाता है कि शीत युद्ध का अंत दक्षिण के देशों के लिए धक्का है क्योंकि अधिकांश दक्षिण के देश या तो समाजवादी मूल्यों के पोषक थे या फिर उदारवादी व समाजवादी दोनों के मिश्रित मूल्यों के पोषक थे। अतः भारत सहित प्रत्येक दक्षिण के देश को अपनी वैदेशिक नीति को शीत युद्ध के खात्मे में परिप्रेक्ष्य में पुनः परिभाषित करना पड़ रहा है। जिसमें उत्तर के देशबाधाएं खड़ी कर रहे है, अतः दक्षिण के देशों को पुनः इस खतरे से निपटने क लिए एकजुट होना होगा। दूसरी तरफ उत्तर के देशों ने शीतयुद्ध के अंत की स्थिति का लाभ लेते हुए सोवियत संघ के विखण्डन में रूचि लिया।

4. उत्तर से सामंजस्य :– भारत सहित सभी दक्षिण के देश नई विश्व व्यवस्था (जिसे कई विद्वानों ने एक ध्रुवीय या कई ने बहुध्रुवीय कहाँ है) में उत्तर के देश अर्थात् विकसित देशों के साथ सामंजस्य

स्थापित करने में लगे। पर यह आसान नही है, क्योंकि इस सामंजस्य के मार्ग में U.S.A के नेतृत्व में उत्तर के देश बाधाएं खड़ी कर रहे है।

U.N.O. पूरी तरह उत्तर के नेतृत्व में दक्षिण को नियंत्रित करने का यंत्र बन गया है। U.N.O. के नेतृत्व में जब काई युद्ध लड़ते है, तो वह उनके लिए एक उपयोगी व्यापार सिद्ध हुआ। उदाहरण के लिए खाड़ी युद्ध में U.S.A.को विशुद्ध रूप से 18 विलियन डालर का लाभ हुआ। इसी तरह से अनेकों उदाहरण है, वास्तव में उत्तर के देश 'बाँटो और राज्य करो' की नीति का अनुसरण करते हुए दक्षिण के देशों को बाल्केनाइज करने का प्रयास किया है। चाहे वह काश्मीर का मुद्दा हो या नाभकीय मुद्दा हो। भारत व रूस के मध्य क्रोयोजनिक प्रोद्योगिकी का समझौता U.S.A. के कारण रूक गया।

विवेचना से स्पष्ट है कि U.S.A.नेतृत्व में उभरी नवीन विश्व–व्यवस्था में विद्यमान आर्थिक, राजनैतिक एवं अन्य संघर्षो में दक्षिण के देश हानिकारक स्थिति में है। इसलिए दक्षिण के देशों द्वारा नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की माँग की गयी है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर मैराथन नियमों में समानता की मांग है। वास्तव में मात्र रूस, चीन व भारत का समन्यव ही पैक्स अमेरिकाना को चुनौती दे सकता है। इस हेतु भारत को नई विश्व व्यवस्था के अनुरूप दृढ़ वैदेशिक नीति अपनानी होगी। ताकि भारत को कम से कम उत्तर में सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाइयों का सामना न करना पड़े।

5. अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था व घरेलू स्थितियों में सम्बन्ध :– इस भूमंडलीकरण के युग में घरेलू व्यवस्था और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था में घनिष्ट सम्बन्ध है। एक विद्वान जेम्स राजनाऊ का अध्ययन इसी पर आधारित है। पर भारतीय वैदेशिक नीति का सर्वेक्षण यह प्रकट करता है, कि यहाँ घरेलू और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की अनदेखी की गयी है। यही कारण है कि हमारी विदेश नीति पिछले कुछ दशकों से दिशाहीन हो गयी, विशेषकर केन्द्र में निरंतर संविद सरकारों के आने से। और दूसरी तरफ 1990 के दशक में अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था और घरेलू राजनीतिक व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन हो गये। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पूर्व U.S.S.R.का विखंडन, शीतयुद्ध का अंत, जर्मन एकीकरण जैसी महत्वपूर्ण घटनाए घटी तो भारत में घरेलू स्तर पर निरंतर संविद सरकारों का आना, अयोध्या कांड, साम्प्रदायिक दंगे, बैक घोटाला, भ्रष्टाचार जैसी घटनाएं घटी। इस घरेलू स्तर की हमारी स्थिति ने हमारी वैदेशिक नीति को कमजोर किया है। अतः भारतीय वैदेशिक नीति का प्रदर्शक खाड़ी युद्ध, क्रायोजनिक समझौता, भारत–अमेरिका सम्बन्ध पर संतोषजनक नहीं प्रतीत होता है। इसलिए एक सर्वेक्षके ने टिप्पणी की है कि 'भारत एक आवाजविहीन राष्ट्र बन गया है उसने अपनी वैदेशिक नीति की दिशा को खो दिया है।'[3]

वास्तव में बदले वैश्विक वातावरण में हमें उक्त सामाजिक व्यवहार की घटनाओं को अपनी वैदेशिक नीति से निकालना होगा और अपने राष्ट्रीय हित के आधार पर अपनी वैदेशिक नीति को पुर्नसूत्रित करना होगा। ताकि बदले वैश्विक परिदृश्य में हम दृढ़ वैदेशिक नीति अपना सके।

6. भारतीय अर्थ–व्यवस्था की स्थिति :– 4 दिसम्बर 1947 को संविधान सभा में नेहरू ने कहा था कि 'अन्तोगत्वा विदेश नीति आर्थिक नीति परिणाम है और जब तक भारत अपनी आर्थिक नीति उचित रूप से विकसित नहीं करता उसकी विदेश नीति अस्पष्ट होगी'(4) 1990 के दशक में जहाँ एक तरफ U.S.A.के नेतृत्व में नई विश्व–व्यवस्था उभर रही थी, वहीं दूसरी तरफ भारतीय अर्थ–व्यवस्था की स्थिति बद से बदतर होती जा रही थीं परिणाम यह हुआ कि 1991–92 में बजट का प्रस्तुतीकरण टालना पड़ा, हमारी अर्थव्यवस्था के सामने वैदेशिक भुगतान का संकट खड़ा हो गया। जिसने भारतीय अर्थ–व्यवस्था क पूरे ढाँचे को पुर्नसंरचना हेतु बाध्य किया। ऐसी स्थिति में हमने बदले वैश्विक पर्यावरण के अनुसार अपनी विदेश नीति को पुर्नसूत्रित करने का प्रयास आर्थिक क्षेत्र में किया। इस हेतु हमने पूर्वोन्नमुखी नीति अपनायी। और अर्थव्यवस्था के उदारीकरण पर बल दिया।

हमने विभिन्न क्षेत्रों में विदेशी निवेश को आमंत्रित किया और अपनी विदेश नीति को। M.F. & W.F. के पक्ष में मोड़ा। बहुत से क्षेत्रों का निजीकरण किया। इसके दो लाभ होंगे प्रथम उत्तर से सामंजस्य स्थापित होगा द्वितीय हमारी अर्थव्यवस्था धीरे–धीरे फैल रही वैश्विक आर्थिक नीति से जुड़ जायेगी।

7. राजनैतिक अस्थिरता :– हमारी संवैधानिक व्यवस्था जैसे–2 इस नई विश्व व्यवस्था के अनुरूप समाजवादी लोकतन्त्र से उदारवादी लोकतन्त्र की तरफ मुड रही है। वर्ष दर वर्ष प्रदेश सरकार व केन्द्रीय सरकार में राजनैतिक अस्थिरता बढ़ी है। क्षेत्रीय स्तर पर छोटे–छोटे दलों के उदय ने राष्ट्रीय मुद्दों को गौड़ बना दिया है, जिससे हमारे राष्ट्रीय हित पर चोट पहुँच रही है। जिससे प्रभावी विदेश नीति के संचालन में बाधा आ रही है। इसके लिए निम्न तत्व उत्तरदायी है।

1. क्षेत्रीय दलों का उदय।
2. कांग्रेस का निरंतर पतन होना।
3. वंश परम्परावाद की राजनीति को बढ़ावा देना।
4. केन्द्र में संविद सरकारों का निरन्तर आना।
5. राजनीति का व्यवसायीकरण एवं।
6. राजनीति का अपराधीकरण।

उक्त सभी तत्वों का मिला–जुला असर यह है कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था ने वैदेशिक नीति के क्षेत्र में 1990 के दशक अपनी दिशा को खो दिया। अब वैदेशिक क्षत्र का कमजोर एवं गुणहीन लोगों ने नेतृत्व किया, फलतः बदलते वैश्विक पर्यावरण में हमारी विदेश नीति नयी चुनौतियों का सामना करने में अक्षम सिद्ध हुई। जिसका परिणाम यह है कि कभी–कभी हमारे विदेश निर्माताओं ने राष्ट्रीय हित के वैदेशिक मुद्दों के बजाय घरेलू राजनीति की चुनौतियों को ज्यादा महत्व दिया है। विशेषकर अल्पसंख्यकों के मुद्दे पर हमने सदैव वैश्विक स्तर वैदेशिक नीति के क्षेत्र में सही नीति का अनुसरण

नहीं किया। अब अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर गुट निरपेक्षता आप्रासंगिक हो गयी, इससे भी हमारी विदेश नीति कमजोर हुई।

भारत विभिन्न धर्मो एवं जातियों में सम्पन्न देश है अब धीरे–धीरे सभी लोगों में जागरूकता आ रही है और सभी वर्ग के लोग विधायिका में प्रतिनिधित्व चाह रहे है। यही कारण है, कि बहुदलीय सरकारं अस्तित्व में आ रही है जो अब भविष्य में भी आती रहेगी। अतः अब हमारे नीति–निर्माताओं को विद्यमान घरेलू परिस्थिति को ध्यान में रखकर वैदेशिक नीति अपनानी होगी। ताकि राष्ट्रीय हित के मार्ग में बाधा न आये। जनतादल, राष्ट्रीय मोर्चा आदि के केन्द्र सरकारों ने हमारी वैदेशिक नीति को कमजोर बनाया है। लेकिन समय के साथ–साथ केन्द्र स्तर U.P.A. और N.D.A. के रूप में दो मजबूत गठबंधन उभरे है जिसने बदलने वैश्विक पर्यावरण के अनुरूप प्रभावी वैदेशिक नीति अपनाने का प्रयास किया है। जिसके निम्न उदाहरण है –

1. हमने 1998 में पुनः भूमिगत परमाणु परीक्षण किया।
2. C.T.B.T. & N.P.T. पर हस्ताक्षर से इन्कार कर दिया।

आज भारतीय वैदेशिक नीति को नई विश्व व्यवस्था में दो तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। पांच केन्द्रीय एशियन गणराज्यों सहित मुस्लिम देशों का उभरता परिसंघ जिसमें उभरते इस्लामिक परिसंघ का नाम दे सकते है। इस इस्लामिक परिसंघ द्वारा भारत के विरूद्ध काश्मीर को लेकर कोई 'रणनीतिक संरचना' सम्भव है। अतः भारतीय वैदेशिक नीति का यह कार्य होना चाहिये, चूँकि इस्लामी देश उदारवादी मूल्यों व मानवाधिकारों का उल्लंघन करते है। जिसके कारण पश्चिम साम्यवाद के विरूद्ध था। अतः इस तर्क की दुहाई देकर हमें U.S.A. के नेतृत्व में पश्चिम देशों से गठजोड़ करना चाहिये, ताकि इस उभरते इस्लामिक ध्रुव का जबाव दिया जा सके। भारत को अपने वैदेशिक नीति घरेलू मुस्लिमों के दबाव का परित्याग कम से कम वैदेशिक नीति के क्षेत्र में कर देना चाहिये। भारत को चीन से भी नाभकीय भय है, इस हेतु भारतीय वैदेशिक नीति को वैश्विक स्तर नाभकीय निरस्तीकरण का प्रयास करना चाहिये। चीनी भय को नियंत्रित करने हेतु हमें अपने प्राचीन सांस्कृतिक सम्बन्धों के आधार पर एक तरफ चीन से सम्बन्ध सुधारने का प्रयास करना चाहिये, तो दूसरी तरफ अमेरिका–इजरायल जापान व वियतनाम से मजबूत सैन्य सम्बन्धों बनाना चाहिये। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर भारतीय वैदेशिक नीति को पुर्नसूत्रित करना होगा, तभी भारत अपनी सम्प्रभुता को सुरक्षित कर पायेगा।

वास्तव में नई विश्वव्यवस्था में भारतीय संसद मे विभिन्न प्रस्तावों को व्यक्त करने में राष्ट्रीय सहमति है। आतंकवाद, वित्तीय मुद्दे, महिला आरक्षण, नाभकीय अस्त्रों के प्रश्न पर संसद के अंदर व बाहर राष्ट्रीय सहमति है। दुर्भाग्यवश इनका क्रियान्वयन सही ढंग से नहीं किया जा रहा है, अतः भारतीय नीति ऐसी होनी चाहिये कि इसका सही ढंग से क्रियान्वयन हो।

निष्कष :– विवेचना से स्पष्ट है कि भारत ने नई विश्व व्यवस्था के अनुरूप अपनी वैदेशिक नीति को मोडने का प्रयास किया है। और इसी परिप्रेक्ष्य में अमेरिका–इजरायल, जापान, वियतनाम आदि देशों एवं क्षेत्रीय संगठनों से अपने सम्बन्धों को पुर्न परिभाषित करने का प्रयास किया है। भारत ने गुट–निरपेक्षता के आप्रासंगिक होने के बाद अपनी विदेशी नीति का पुनरीक्षण किया है। जिसका एक उदाहरण भारत द्वारा अपनायी गयी पूर्वोन्मुखी नीति है। नई विश्व–व्यवस्था जो शक्ति–संरचना में एक ध्रुवीय (कई विद्वानों ने बहुध्रुवीय कहा है) और वैचारिक दृष्टि स उदार लोकतन्त्र एवं पूंजीवाद का पोषक है। इसके अनुरूप भारत ने अपनी विदेश नीति को पुर्नपरिभाषित करने का प्रयास किया है और अपनी नई आर्थिक नीति के माध्यम से भूमंडलीकण की प्रक्रिया से जुड़ने का प्रयास किया है। चीन, अमेरिका और इजरायल के सम्बन्धों में सकारात्मक प्रगति हुई है। भारत ने अब विचारधारा को छोड़कर राष्ट्रीय हित के आधार पर विदेश नीति के निर्धारण का संकल्प लिया है। भारत द्वारा 1998 में किया गया परमाणु विस्फोट इसी नीति का परिचायक है। इसके साथ–साथ भारत द्वारा U.N.O. के लोकतंत्रीकरण की मांग भारत के राष्ट्रीय हित के साथ–साथ विश्वहित से भी प्रेरित है। भारत ने अपने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर उत्तर से सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है। उक्त सभी तथ्यों की प्राप्ति हेतु नवीन विश्व व्यवस्था में भारत ने देश के अंदर राष्ट्रीय सहमति के माध्यम से पाने का प्रयास किया है। संक्षेप में हम कह सकते है कि नई विश्व व्यवस्था में भारतीय विदेश नीति अधिकाधिक वैश्विक स्तर पर स्वावलम्बी बनने का प्रयास कर रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. नौटियाल अन्नपूर्णा/भारत और नई विश्व–व्यवस्था/साउथ ऐशियन प्रकाशन, नई दिल्ली/वर्ष 1996/पष्ठ सं0 10–11।
2. द हिन्दू 12 मई 1992।
3. के0 नटवर सिंह/एन्वाइस–लेस–नेशन/इंडियन एक्सप्रेस/10 अगस्त 1993।
4. उद्वरित/फारेन पालिसी आफ इंडिया/नई–दिल्ली/लोकसभा सचिवालय/1987/ पृष्ठ संख्या 5।
5. अन्य स्व अध्ययन पर आधारित विचार।